7

भाषा की प्रकृति व संरचना

भाषा की उत्पत्ति कब व कैसे हुई, यह एक बहुत ही जटिल सवाल है। इस सवाल में ही कई अन्य बुनियादी सवाल अन्तर्निहित हैं जैसे इन्सान का उद्भव कब और कैसे हुआ, उसका विकास कैसे हुआ, क्या इन्सान ने अपने उद्भव के समय से ही भाषा का प्रयोग करना शुरू कर दिया था? इस सवाल के जवाब पाने की दिशा में कई अलग-अलग तरह के प्रयास हुए हैं और कुछ बेहतर जवाब भी मिले हैं, लेकिन इन सवालों के और बेहतर जवाब जानने के प्रयास अभी भी जारी हैं। मूल प्रश्न यही है कि इन्सानी भाषा कब और कैसे अस्तित्व में आई। यह प्रश्न इन्सान होने के कई अन्य मसलों से जुड़ा है। इस अध्याय में प्रो राजेन्द्र सिंह बताते हैं कि इस प्रश्न को लेकर हमारी समझ कुछ हद तक आगे बढ़ी है मगर कई उलझनों को सुलझाना अभी बाकी है।

इस चर्चा में वे भाषा की उत्पत्ति के बारे में वर्तमान में चर्चित दो प्रमुख मतों पर बातचीत करते हैं: पहला, ऐन्ड्रयू कारस्टेअर्स-मैकार्थी का प्रकार्यवादी मत, जिसके अनुसार भाषा इन्सानी ज़रूरतों के चलते चरण दर चरण और बहुत ही धीमी प्रक्रिया से विकसित हुई; और दूसरा चॉमस्की का मत –जिसके अनुसार इन्सान के साथ ही भाषा भी एकदम से विकसित हो गई यानी होमो सेपियंस के पास भाषा संकाय था और इसीलिए भाषा क्षमता भी। ये दोनों मत भाषा की उत्पत्ति के बारे में क्या-क्या कहते हैं और इन मतों में कौन-से ऐसे बिन्दु या प्रश्न हैं जो और स्पष्टीकरण की माँग करते हैं, जैसे, यदि भाषा का उद्भव एक आकस्मिक घटना थी जैसा कि चॉमस्की कहते हैं तो क्या होमो सेपियंस (जिनमें भाषा का प्रादुर्भाव हुआ) से पहले की प्रजातियाँ भाषा का उपयोग ही नहीं करती थीं? क्या भाषा संकाय का मानव में प्रविष्ट होना एक अकस्मात घटना थी? ये और भाषा की प्रकृति से जुड़े ऐसे ही कुछ अन्य सवाल इस चर्चा के केन्द्र में हैं।

प्रश्न: प्रो सिंह, सबसे पहले हम आपसे उस विषय पर प्रश्न करना चाहेंगे जिसके बारे में अक्सर सवाल उठता है - भाषा का मूल क्या है? किस प्रकार उसका जन्म हुआ? आम तौर पर इस प्रश्न के उत्तर में कहा जाता है कि या तो कई भाषाएँ एक साथ जन्मीं या फिर केवल एक भाषा थी (जो बाद में कई भाषाओं में बँट गई)। क्या भाषा का धीरे-धीरे विकास हुआ था या वह अकस्मात् मानव मस्तिष्क में प्रस्फुटित हो गई? इस बारे में कृपया विस्तार से बताएँ।

राजेन्द्र सिंह: मेरे विचार में आज उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर पहली चीज़ तो यह कही जा सकती है कि भाषा मानव प्रजाति तक ही सीमित है, आदान-प्रदान (संचार) की इतनी जटिल प्रणाली किसी भी और प्रजाति में नहीं पाई गई है। इस [कथन] के बाद हम विकासवादी विज्ञान की मदद ले सकते हैं। एन्ड्रयू कारस्टेअर्स-मैकार्थी[1] ने हाल ही में इस विषय के बारे में शोध समीक्षा की है। उनका कहना है कि भाषा का जन्म और विकास मानव-मस्तिष्क के आकार में वृद्धि के साथ-साथ हुआ।

यह तब हुआ जब होमो सेपियंस ने अपना आदिम, कन्द-मूल पर निर्भर जीवन छोड़ मांस खाना प्रारम्भ किया। इससे उसके मस्तिष्क के आकार में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई, साथ ही उसके वाग्यंत्र में कुछ बदलाव भी हुए। कारस्टेअर्स-मैकार्थी का अनुमान है कि उस समय का मनुष्य ध्वनि समूहों का उच्चारण लयबद्ध तथा सोपानबद्ध (Hierarchical) पैटर्न में करता था जिसे अक्षर (Syllable) की उत्पत्ति मानी जा सकती है। स्वर और व्यंजनों की लयबद्ध अभिरचना का प्रयोग बड़े आकार के मस्तिष्क द्वारा विचारों के आदान-प्रदान के लिए किया गया। इसी प्रक्रिया के फलस्वरूप कालान्तर में भाषा का पूर्ण विकास हुआ। मेरा मानना है कि उनका अनुमान मूलत: सही है। किसी भी भाषा के विकसित होने के क्रम में सबसे पहले आता है एक समृद्ध शब्दकोश - जैसे-जैसे होमो सेपियंस का सांस्कृतिक विकास हुआ, उनके द्वारा वांछित शब्दों की संख्या भी बहुत बढ़ गई। परिष्कृत वाग्यंत्र से सम्भव हुए लयबद्ध उच्चारण और शब्दों की प्रचुरता से जटिल सन्देश बनने लगे जिनसे आगे चलकर उचित संज्ञा-पदबन्ध[2] बने। वे आगे यह प्रमाणित करते हैं कि विश्व में आज भी कई भाषाएँ हैं जिनमें केवल संज्ञा-पदबन्ध हैं और पुनरावर्तिता (Recursiveness) या अन्त:स्थापन (Embedding) जैसी कोई चीज़ नहीं हैं। वाक्य के अन्दर वाक्य स्थापित करने की इस प्रक्रिया को अन्त:स्थापन कहते हैं और संज्ञानात्मक (Cognitivist) विचारधारा में इसे भाषा का अभिन्न हिस्सा माना जाता रहा है। कारस्टेअर्स-मैकार्थी एक मुद्दा और उठाते हैं – वह यह कि कुछ संचार प्रणालियाँ ऐसी हैं जिन्हें भाषाओं का दर्जा मिलना चाहिए जबकि उनमें अन्त:स्थापन अनुपस्थित है। मैं उनके इस अनुमान से भी सहमत हूँ कि वाक्यों का संज्ञा-पदबन्धों में बदला जा सकना और दूसरे वाक्यों में अन्त:स्थापन उतना ज़रूरी नहीं है जितना कि समझा जाता है।

पारम्परिक रूप से भाषा विज्ञान में इसका उदाहरण 'चाइनीज़ बॉक्स' (चीनी डिब्बा) रहा है जिसमें एक डिब्बे में दूसरा डिब्बा, दूसरे में तीसरा, तीसरे में चौथा और इसी तरह क्रमश: रहता है। इसी तरह वाक्यों के अन्दर दूसरे वाक्य लगाना होमो सेपियंस के वाग्यंत्र में हुए नए बदलावों और उसके समय में निरन्तर बढ़ती सांस्कृतिक जटिलताओं के कारण उपलब्ध

लयबद्ध उच्चारण की सम्भावनाओं का सन्दोहन (अधिक से अधिक भाषा का इस्तेमाल) था। मेरे अनुसार, जो बात कारस्टेअर्स–मैकार्थी ने उठाई है वह सही है, चाहे उनके कुछ अनुमान सही हो या नहीं। मैं यह भी मानता हूँ कि उनका चरण दर चरण प्रगति का दावा सही है। इसमें हर चरण एक धीमा चरण है, कुछ हद तक यह दरअसल मार्क्स[3] द्वारा उठाए गए उस पुराने प्रश्न से सम्बन्धित है – जो सभी सैद्धान्तिक उद्यमों की मूल समस्या है – कि इस तथ्य को कैसे मान लें कि छोटे मात्रात्मक बदलाव ही गुणात्मक बदलाव लाते हैं। इससे प्रतीत होता है कि भाषा के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। मतलब होमो सेपियंस के वाग्यंत्र, शब्दकोश और सांस्कृतिक-व्यावहारिक परिवेश में हुए छोटे, चरण दर चरण बदलावों से अन्ततः आज खास तौर से इंडो-यूरोपियन भाषाओं में देखी जा सकने वाली जटिलताओं का निर्माण हुआ। यहीं पर भाषा विज्ञान ने भाषा के प्रस्फुटन का गहनता से अध्ययन किया है और यह प्रस्फुटन सांस्कृतिक जटिलता, बातचीत की आवश्यकताओं, शब्दकोश के आकार, वाग्यंत्र में हुए बदलावों और मस्तिष्क के आकार में हुई महत्वपूर्ण वृद्धि का अभिसरण (Convergence) है। मेरे हिसाब से यही सबसे बढ़िया उत्तर है।

ज़ाहिर है कि अन्य मत भी हो सकते हैं जैसे कि चॉमस्की[4] का। चॉमस्की भाषा-क्षमता की उत्पत्ति को होमो सेपियंस के उत्थान से जुड़ा हुआ मानते हैं, मतलब यह कि दोनों एक ही समय साथ-साथ हुए जबकि दूसरी सोच में यह मानकर चलना ज़रूरी नहीं कि भाषा और मानव प्रजाति का विकास एक साथ हुआ। मुझे चॉमस्की से कोई व्यक्तिगत रोष नहीं है। अधिकतर भाषा-सम्बन्धी अटकलों को दो खेमों में बाँटा जा सकता है। एक तो है चॉमस्कीवादी, यानी कि एक झटके में हुआ आकस्मिक विकास। दूसरा है प्रकार्यवादी (Functionalist) विचारधारा का जिसके अनुसार भाषा घुरघुराने से शुरू होती है। फिर लोग अपनी दिनचर्या से जुड़ी अर्थपूर्ण, लयबद्ध ध्वनियाँ निकालते हैं और अन्त में, यह मानव भाषा का रूप ले लेती है। हॉकेट (1949) और शायद जैस्परसन भी कुछ-कुछ यही मानते थे।

वर्तमानकालिक प्रमाण भी यही सुझाते हैं कि हॉकेट या उनके जैसे सिद्धान्तों में कुछ सच्चाई है (मतलब घुरघुराना इत्यादि)। कारस्टेअर्स-मैकार्थी और उनके जैसे व्यक्तियों के योगदान से इस विचारधारा को मजबूती मिली है कि कठिन परिश्रम की स्थितियों में निकली घुरघुराने की ध्वनियाँ जटिल अभिव्यक्तियों में बदल गईं क्योंकि इस समय तक होमो सेपियंस का व्यावहारिक परिवेश समृद्ध हो गया था। इस विषय में सैद्धान्तिक वाद-विवाद का मुद्दा जो भाषा के जन्म से सीधा जुड़ा हुआ है और उसे समझने में मददगार हो सकता है – वह यह है कि क्या भाषा और बातचीत (संचार) मूलभूत रूप से जुड़े हुए हैं? ऐसा आभास हम में से कई लोगों को होता आया है, खास तौर से प्रकार्यवादी विश्लेषणों में। इसके विपरीत चॉमस्की, पिआजे आदि भाषा-दार्शनिकों का मानना है कि इन दोनों में कोई सम्बन्ध नहीं है। भाषा केवल क्रीड़ा-वस्तु है और मनुष्यों द्वारा भाषा का प्रयोग एक संयोग ही है। भाषा क्या करती है या भाषा क्या करने के लिए बनाई गई है, इस विषय पर एक विवाद है। मैं फिर दोहराता हूँ कि दार्शनिकों का आम तौर पर यह मानना है कि भाषा का कोई औचित्य नहीं है। वह बस हमारे मनोरंजन के लिए है और उसका बातचीत में प्रयोग होना यह प्रमाणित नहीं करता कि उसका

मूलभूत काम वही है। आजकल विकासवादी नृविज्ञान (Evolutionary Anthropology) का मानना यह है कि भाषा की उत्पत्ति मानव समुदाय में बातचीत कर सकने की प्रबल आवश्यकता के कारण हुई। आज भी वे भाषाएँ जिनमें प्राय: इंडो-यूरोपियन भाषाओं में पाए जाने वाले लक्षण नहीं हैं, उनका जैविक मूल भी बातचीत कर पाने की आवश्यकता में है। इस प्रकार्यवादी दृष्टिकोण का अवलोकन अब सम्भव है और यह जानना भी कि प्रकार्यवादी जब कहते हैं कि भाषा का आधार बातचीत है, तो उनका तात्पर्य क्या है?

प्रश्न: कारस्टेअर्स-मैकार्थी की ओर वापस चलते हैं। उनका विचार है कि होमो सेपियंस अपने पैरों पर चल सकते थे और इस कारण उनके वाग्यंत्र का विकास हुआ। शब्दकोश का विकास सही और सटीक ढंग से बातचीत करने के लिए आवश्यक था। विकासवादी नृविज्ञान का यह सिद्धान्त आप एक प्रकार से बच्चे में पुर्ननिर्मित होता हुआ देख सकते हैं, पर यह सब काफी जटिल है। चॉमस्की इसके उत्तर में कहते हैं कि भाषा की पूरी जानकारी बहुत छोटे समय में पैदा हो जाती है। एक साल से कुछ कम समय में बच्चे काफी जटिल अभिव्यक्ति में सक्षम हो जाते हैं। प्रकार्यवादियों का इस बारे में क्या कहना है?

राजेन्द्र सिंह: आपका कहना ठीक है, मेरे विचार में कारस्टेअर्स-मैकार्थी इस सम्बन्ध को अवश्य दिखलाते हैं और यह जानकारी पुरानी है। इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि एक बच्चे का प्रारम्भिक विकास पूरे मानव विकास की पुनर्रचना ही है। यह सम्बन्ध प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन[5] (Phylogeny) और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन[5] (Ontogeny) के बीच का है।

प्रश्न: क्या आप प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन का मतलब स्पष्ट कर सकते हैं?

राजेन्द्र सिंह: यह दोनों विकासवादी सिद्धान्त के प्रमुख शब्द हैं। विकासवाद के हर प्रकार, नव डार्विनवाद (Neo-Darwinism) आदि में भी, प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन महत्वपूर्ण है। काफी समय से दावा किया जाता रहा है कि किसी प्रजाति का लम्बे समय के बाद हुआ विकास एक प्रकार से सम्पीड़ित (Condensed) हो जाता है या सिकुड़ जाता है और फिर उस प्रजाति के हर सदस्य द्वारा, जैसा कि आपने कहा, थोड़े समय में पुनर्रचित किया जाता है। यानी कि हमारी प्रजाति के विकास का इतिहास हर सदस्य द्वारा दोहराया जाता है।

प्रश्न: प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन के मूलार्थ क्या हैं?

राजेन्द्र सिंह: प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन का मतलब है एक प्रजाति विशेष का विकास यानी, एक पूरे समूह का विकासक्रमिक इतिहास। और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन वह है जो उस समूह के हर सदस्य के प्रारम्भिक विकास में होता है यानी पूरे प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन का पुर्ननिर्माण। इन दोनों क्रियाओं के सम्बन्ध को लेकर लगभग सभी एकमत हैं। अब बाल भाषा को लीजिए। इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम हुआ है। ऐसा देखा गया है कि जब बच्चा पालने में खेल रहा होता है तो वह संसार की कई भाषाओं में पाई जाने वाली ध्वनियाँ निकालता है। इस अवस्था में वह

कभी जापानी बोलता हुआ लगता है, कभी जर्मन। फिर धीरे-धीरे उसकी ध्वनियाँ सीमित होती चली जाती हैं और एक समय बाद वह केवल अपनी भाषा ही निकालता है। इस तरह वह उस समुदाय का सदस्य बन जाता है जिसमें उसका जन्म हुआ था। अब इस रिकॉर्डिंग को ही लीजिए जो अभी चल रही है। अगर इस रिकॉर्डिंग को दस गुना गति से सुना जाए तो यह दस गुना कम समय में खत्म हो जाएगी। यही बच्चा भी करता है। कारस्टेअर्स-मैकार्थी काफी ध्यानपूर्वक इसका वर्णन करते हैं। यदि प्रारम्भिक अवस्था में बच्चे के वाग्यंत्र को देखा जाए तो वह सच में बाकी प्रजातियों के वाग्यंत्रों से मेल खाता है, किसी पक्षी या डॉल्फिन मछली के वाग्यंत्रों से भी। धीरे-धीरे उसकी ध्वनियों की संख्या बढ़ने लगती है। अक्षरों की लयबद्धता कुछ देर में पनपती है। इस 'कुछ देर में' का क्या मतलब है? एक बच्चे के जीवन के तीन हफ्ते भी तीन से 30 हज़ार साल तुल्य हो सकते हैं। व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन के कारण समय सिकुड़ जाता है क्योंकि अगर हम सौ साल भी जीवित रहें तो उन सौ सालों में हमें लाखों सालों का विकास दोहराना होता है। यही हर बच्चा करता भी है।

प्रश्न: परन्तु यदि हम कारस्टेअर्स-मैकार्थी का मत स्वीकार कर लें तो इस सम्पीड़न को किस प्रकार समझें? प्लेटो के प्रश्न[6] (Plato's Problem) का उत्तर कैसे दिया जाए?

राजेन्द्र सिंह: इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप किस विचारधारा के समर्थक हैं, चाहे चॉमस्कीवादी हों या कारस्टेअर्स-मैकार्थीवादी। प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन पर भी कोई असर नहीं पड़ेगा। चाहे भाषा की उत्पत्ति कैसे भी हुई हो, हर शिशु अपनी प्रजाति का विकासक्रमिक इतिहास दोहराता है।

प्रश्न: चॉमस्की का कहना है कि जब तक एक भाषा अवयव या संकाय (Language Faculty) की कल्पना नहीं की जाएगी, तब तक एक समृद्ध और जटिल व्याकरणिक व्यवस्था के अर्जन को समझा नहीं जा सकता।

राजेन्द्र सिंह: चॉमस्की के तर्क अपनी जगह ठीक हैं पर वह प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन के रूप-प्रतिरूप सम्बन्ध से स्वतंत्र हैं। चॉमस्की का तर्क है कि बच्चा सीमित तथ्यों के आधार पर भी भाषा अर्जित कर लेता है, मतलब, हमउम्र बच्चों या परिवार के सदस्यों के साथ सीमित, ज़्यादातर टूटे-फूटे वार्तालाप के आधार पर। इस सीमित सामग्री की आधारशिला पर वह अनगिनत नए, कभी न सुने या बोले गए वाक्य बना लेता है। चॉमस्की का मानना रहा है कि इस कारण से बच्चे में एक ऐसा संकाय होना चाहिए जो सीमित भाषा के आधार पर एक आन्तरिक व्याकरण का निर्माण करता हो। उनके अनुसार यही एक तरीका है - मानव मस्तिष्क में एक ऐसा यंत्र, यानी भाषा अवयव, जो केवल भाषा के विश्लेषण के लिए हो। जिस समय चॉमस्की ने यह बात पहली बार कही उस समय भाषा अर्जन को अनुभववादी व्यवहारवाद आदि के प्रकाश में देखा जाता था जो स्किनर व अन्य व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों ने प्रस्तावित किया था। चॉमस्की के अनुसार भाषा अर्जन व्यवहारवादी सिद्धान्तों से मेल नहीं खाता, जिसका मतलब है कि भाषा बच्चे में अन्तर्जात होती है। हमारे अधिगम सिद्धान्त (Learning Theories) परिष्कृत हो सकते हैं पर फिर भी वे भाषा अर्जन को सीमित तौर पर ही समझा पाएँगे।

चॉमस्की ने तर्क दिया कि यह मानना ही पड़ेगा कि एक भाषा अवयव है। इस बारे में दो तरह से विचार किया जा सकता है। चॉमस्की दो तरह के कारणों से सही या गलत हो सकते हैं। मान लीजिए हम एक अत्यन्त परिष्कृत अधिगम सिद्धान्त का निर्माण कर लेते हैं। तब हम दिखा पाएँगे कि चॉमस्की का यह तर्क कि भाषा अर्जन मस्तिष्क के किसी 'चमत्कारी' भाषा अवयव से होता है, गलत है। दूसरा तरीका है यह दिखाना कि 2 वर्ग मिमी का वह भाषा अवयव सिर्फ भाषा के लिए समर्पित नहीं है। परन्तु एक वैज्ञानिक परिकल्पना को कैसे जाँचा जाए? चॉमस्की की परिकल्पना को जाँचने का एक तरीका है कि उसे इन वैकल्पिक दृष्टिकोणों से देखा जाए। दूसरा यह पता लगाया जाए कि क्या सच में हमारी प्रजाति के इतिहास में ऐसा एक क्षण था जब यह भाषा अवयव हमारे मस्तिष्क में प्रविष्ट हो गया। इन विकल्पों पर काम पहले हुआ है। पिआजे और बारबरा इनहैल्डर (1952) के पदचिन्हों पर लोगों ने अधिक परिष्कृत वैकल्पिक अधिगम सिद्धान्त विकसित करने के प्रयास किए हैं। स्किनर आदि के उद्गमों से अधिक परिष्कृत। एक और नया सिद्धान्त है समान्तर वितरित प्रसंस्करण[7] (Parallel Distributed Processing) जिसके अनुसार मस्तिष्क को एक अकेले कम्प्यूटर की बजाय 25 या 40 समान्तर कम्प्यूटरों के समूह के रूप में देखना चाहिए, मतलब यह कि मस्तिष्क देखने, बोलने आदि काम इन समान्तर कम्प्यूटरों की मदद से एक साथ एक ही समय में संसाधित करता है।

मैं किसी सिद्धान्त की सफाई नहीं दे रहा हूँ, मैं बस यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि चॉमस्की के सिद्धान्त को परखने का एक तरीका है अधिक परिष्कृत अधिगम सिद्धान्तों का निर्माण कर यह दिखा देना कि जिन गुणों का श्रेय भाषा अवयव को दिया जाता है, वे असल में उन अधिगम सिद्धान्तों के अन्तर्गत समझे जा सकते हैं। इस दिशा में कुछ सफलताएँ मिली भी हैं परन्तु चॉमस्की के तर्क का कुछ हिस्सा अभी भी मान्य है; वाक्य विन्यास (Syntax) के क्षेत्र में चॉमस्की द्वारा प्रयुक्त संचलन[8] (Movement) का समान्तर वितरित प्रसंस्करण में स्पष्टीकरण नहीं है। उनके अधिकतर तर्क वैकल्पिक रूप से समझे जा सकते हैं पर संचलन नहीं। आज भी मानव भाषाओं में पाया जाने वाला संचलन समान्तर वितरित प्रसंस्करण के द्वारा समझा नहीं जा सका। दूसरा तर्क: बच्चा हमेशा संरचनाधीन[9] संक्रिया (Structure Dependent Operation) का ही चयन करता है। ऐसा क्यों है कि बच्चा कभी भी मस्तिष्क में व्याकरण का ऐसा नियम नहीं बनाता जो कहे कि 'वाक्य के तीसरे शब्द के साथ ऐसा करो' या 'पाँचवे शब्द के साथ वैसा करो'। बच्चे कभी भी इस तरह के नियम नहीं बनाते। उनके मस्तिष्क में 'सर्वनाम को शब्द के आगे (या पीछे) ले जाओ,' इस तरह के नियम होते हैं। ये नियम हमेशा संरचनाधीन होते हैं न कि रैखिक (Linear)। यहाँ मेरा ख्याल है कि चॉमस्की सही हैं। बच्चे कभी भी ऐसे नियम नहीं बनाते जिनका सम्बन्ध सिर्फ वाक्यों की रेखीय लड़ी में शब्दों के बढ़ते–घटते क्रम के अनुसार हो। वे जिन नियमों का निर्माण करते हैं वे सोपानबद्ध होते हैं। एक तरीका है ऐसे अधिगम सिद्धान्त का निर्माण करना जो इसका स्पष्टीकरण दे सके। दूसरा है कारस्टेअर्स-मैकार्थी के तथ्यों पर विचार। जर्मनी के मैक्स प्लान्क इन्स्टिट्यूट ऑफ इवॉल्यूशनरी एन्थ्रोपॉलोजी पर इस

दिशा में अनुसन्धान जारी है। इस उपक्रम का लक्ष्य यह देखना है कि किस प्रकार के विकल्प उपलब्ध हैं। भाषा अवयव के आकस्मिक प्रकट होने के अलावा क्या उत्तर हैं? हम में यह क्षमता कैसे आई? यह किस जैविक प्रक्रिया का परिणाम है? इन प्रश्नों के द्वारा लोगों ने चॉमस्की के विकल्प ढूँढने के प्रयास किए हैं। यदि इन प्रश्नों के उत्तर नहीं भी मिले तो भी वे मान्य रहेंगे। यह विषय-वस्तु वैज्ञानिक और अनुभवमूलक हैं, धार्मिक नहीं। मेरा मतलब, चॉमस्की अपने विचारों से ऐसे जुड़े हुए हैं जैसे वह उनका धर्म हो और बाकी लोग भी अपने विचारों से ऐसे ही जुड़े हुए हैं। हम में से वे लोग जो ऐसा नहीं मानते, उनके लिए कई आकर्षक विचार उपलब्ध हैं और हमें उस दिन की राह देखनी चाहिए - और मैं देख भी रहा हूँ - जब सारे विचार एक साथ मिल जाएँगे। चॉमस्की के योगदान को नकारा नहीं जा सकता परन्तु उनके दावे को सही परिप्रेक्ष्य में रखना पड़ेगा। मेरे लिए तो यह एक सतत् अनुभवमूलक विवाद है, धर्म का अडिग सिद्धान्त नहीं।

प्रश्न: यह कहना आसान है कि भाषा एक 2 वर्ग मिमी के टुकड़े के अकस्मात् आने से पैदा हो जाती है परन्तु शब्दकोशों और वाक्यविन्यासी संरचनाओं की भिन्नता का क्या होगा?

राजेन्द्र सिंह: चॉमस्कियाई पद्धति में इसका उत्तर देना आसान है। खुद चॉमस्की (और उनके कुछ अनुयाइयों) का उत्तर सीधा और सरल है। उनका दावा है कि स्वयं भाषा अवयव में ऐसे कोई नियम या बाध्यताएँ नहीं हैं जैसी कि असल, प्राकृतिक भाषाओं में दिखाई देती हैं। भाषा अवयव में केवल उन बाध्यताओं का समुच्च्य है जो बताती हैं कि किस प्रकार के नियम या व्याकरण नहीं हो सकते। उनका तार्किक मत कुछ इस प्रकार है: "मानव भाषाओं की सबसे विशेष बात यह नहीं कि वे इतनी भिन्न हैं वरन् यह कि वे उतनी भिन्न नहीं हैं जितनी हो सकती हैं।" उनका मत हमेशा से यही रहा है। जो बात उन्हें प्रभावित करती है वह यह नहीं कि हिन्दी, हरयाणवी या बंगाली अँग्रेज़ी से इतनी अलग हैं पर इतनी भी अलग नहीं जितनी कि हो सकती हैं। इसी तरह यह कि जापानी और फ्रेंच भी उतनी अलग नहीं जितनी हो सकती हैं।

पिछले 50 सालों में चॉमस्कियाई उपक्रम की सकारात्मक उपलब्धियाँ भाषाओं की समानताओं पर ध्यान केन्द्रित करने से उभरी हैं। इनसे हमने काफी सीखा है। यह जानकर आश्चर्य और हर्ष होता है कि सतही भिन्नताओं के बावजूद भाषाओं में कई आन्तरिक समानताएँ हैं। 1980 के दशक का एक पुराना उदाहरण, जिसको आज हम थोड़ा अलग तरह से समझते हैं, अध्यापन कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण है पर नाटकीय भी। चॉमस्की के एक विद्यार्थी, शायद जॉन ब्रेज़नन, ने संसार की भाषाओं की प्रश्नवाचक व्यवस्थाओं में दिलचस्प लक्षण पाए थे। हिन्दी जैसी भाषाओं में प्रश्नवाचक शब्द कुछ खास नहीं करता, मतलब 'कुछ' (something) और 'क्या' (what) एक ही स्थान पर प्रकट होते हैं। (जैसे जॉन क्या लाया? और जॉन कुछ लाया?) दूसरी तरफ अँग्रेज़ी जैसी भाषाओं में John bought something का What did John buy? बन जाता है। सो अँग्रेज़ी में कुछ (something) और क्या (what) में 'दाएँ से बाएँ' वाला सम्बन्ध है। 1970 के दशक में यह पाया गया कि संसार की किसी भी भाषा में, जिसमें क्रिया मध्य में

आती हैं (जैसे अँग्रेज़ी, जर्मन) प्रश्नवाचक सर्वनाम (क्या, कौन, कहाँ, कब, आदि) अप्रश्नवाचक सर्वनाम (कुछ, कोई आदि) की दाईं ओर नहीं पाया जाता। उस तरह की भाषा असम्भव प्रतीत होती है। यह जानकारी काफी दिलचस्प थी- मैं तो कहूँगा एक महत्वपूर्ण जानकारी थी। इससे पता चलता है कि भाषाओं में समानताएँ होने पर भी कुछ सर्वमान्य बाध्यताएँ हैं जिनका उल्लंघन नहीं किया जा सकता, वरना यह समझना मुश्किल हो जाएगा कि क्यों ऐसी कोई भाषा नहीं जिसमें *John bought what?* सम्भव हो (सामान्य प्रश्न की तरह ना कि प्रतिध्वनि प्रश्न (echo question) की तरह)।

प्रश्न: इसी प्रकार हम यह भी कह सकते हैं कि एक रंगों की पहचान करने वाला अवयव है जो रंगावली (Spectrum) को सीमित रखता है।

राजेन्द्र सिंह: बिलकुल।

प्रश्न: वह मानव दृष्टि की सम्भावनाओं को सीमित करता है और इस प्रकार कि हम उसे संरचना पर लागू बाध्यता कह सकते हैं बजाय कि एक 2 मिमी के टुकड़े के गुण के...

राजेन्द्र सिंह: हाँ, अवश्य।

प्रश्न: जो बात हमें जाननी है वह यह है कि वह कौन-सी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत कुछ सर्वमान्य बाध्यताओं के होते हुए एक समुदाय या व्यक्ति समुच्च्य घुरघुराने से भाषा के परिष्कृत प्रयोग तक पहुँच जाता है। क्या बच्चा सच में प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन का पूरी तरह से पुनर्निर्माण करता है?

राजेन्द्र सिंह: माफ कीजिए, परन्तु आपके सन्देह का स्रोत क्या है?

प्रश्न: क्योंकि हमारी प्रजाति की कुछ क्षमताएँ चार साल के बच्चे की क्षमता से कहीं अधिक हैं। ऐसी कई परिष्कृत प्रोक्तियाँ (Discourses) हैं जो बच्चे को उपलब्ध नहीं होतीं। वे कौन-सी प्रक्रियाएँ हैं जिनसे घुरघुराने की उस प्रारम्भिक अवस्था से भाषा के उत्पन्न होने की सम्भावना बनती है? बच्चे वाला उदाहरण इसका उत्तर नहीं देता।

राजेन्द्र सिंह: चलिए, जो सवाल आपने उठाए हैं मैं उनको क्रमवार लेता हूँ, यह दिलचस्प है कि आपने चॉमस्की की भाषाओं पर लागू बाध्यताओं की तुलना मनुष्यों के रंग प्रत्यक्षण (Colour Perception) से की, क्योंकि यह स्वयं चॉमस्की के पुराने उदाहरणों में से एक है। वे बहुधा दृष्टि की बात करते हैं और कहते हैं कि यदि बिल्ली की दृष्टि की जैविक संरचना मनुष्य से भिन्न है क्योंकि मनुष्यों की रंगावली कुछ बाध्यताओं के कारण सीमित है, तो यह कल्पना मुश्किल नहीं कि उनकी भाषा पर भी कुछ बाध्यताएँ लागू होती हैं। सो चॉमस्की भी आपसे एकमत होंगे कि वह बिलकुल दृष्टि के समान है। तथ्य यह है कि मैं और आप केवल सात या नौ रंग देख पाते हैं। संख्या कुछ भी हो सकती है, बस यह मान लेते हैं कि हम कुछ सीमित रंग ही पहचान पाते हैं। चॉमस्की और मेरे ख्याल में आप भी, यह तर्क देंगे कि यह सीमा जैविक है। यही उनका भी तर्क है। इस बात में कोई मतभेद नहीं कि प्रश्नवाचक

सर्वनाम का दाईं ओर न जा पाना और हमारा कुछ निश्चित रंग ही देख पाना समान है, दोनों जैविक रूप से निर्धारित हैं।

दूसरा मुद्दा आपने उठाया था प्रोक्तियों की जटिलता का। आपने कहा कि बच्चा पूरे मानव समाज की प्रोक्ति क्षमता और विविधता को प्रदर्शित नहीं कर सकता। इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमें परिपक्वन योजना (Maturational Schedule) का सहारा लेना पड़ेगा। बात हो रही है प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन के बीच की खाई भरने की। यह महसूस किया गया कि हम अकेले सब कुछ प्रदर्शित नहीं कर सकते। ऐसा इसलिए क्योंकि जीव के रूप में विकसित होते बच्चे में संज्ञानात्मक विकास और व्यावहारिक सन्दर्भ में चीज़ें पहचानने की क्षमता तत्काल उपलब्ध नहीं होती, क्योंकि प्रत्यक्षण (Perception) सीमित है, संज्ञान सीमित है और शरीर की क्षमताएँ सीमित हैं। यहाँ हमें परिपक्वन योजना की आवश्यकता पड़ती है, अतः आप प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन के साथ परिपक्वन योजना जोड़ देते हैं। मेरे विचार में परिपक्वन योजना होने के प्रमाण दिलचस्प और प्रासंगिक हैं। हिन्दी और अँग्रेज़ी को देखा जाए तो अलग-अलग तथ्य मिलते हैं। अँग्रेज़ी की मॉर्फोलॉजी (Morphology या शब्द रूप विज्ञान) साधारण और हल्की है और हिन्दी की काफी जटिल। परिपक्वन योजना के कारण कुछ नियम बच्चे के दो साल के होने पर प्रकट होते हैं, कुछ चार या साढ़े चार साल के होने पर।

इससे जुड़ा हुआ सवाल यह है कि औद्योगीकरण के उत्तर में समाज में भाषाएँ अतिपरिष्कृत कैसे हो गईं? मेरे ख्याल में चॉमस्की का उत्तर होगा कि यह हमारी क्षमता की सीमा के अन्दर है, मतलब, बाध्यताओं द्वारा सीमित परिधि के अन्दर और मैं भी यही मानता हूँ। चॉमस्की के लिए यह कहना सहज होगा कि होमो सेपियंस होते हुए अगर हम किसी इमारत की 10वीं मंज़िल से कूद जाएँ तो निश्चय ही हम उड़ने नहीं लगेंगे। इस सीमा के होते हुए भी हम हज़ारों और काम कर सकते हैं जैसे वायलिन बजाना, सितार बजाना आदि। परन्तु एक ऊपरी सीमा भी है, वह यह कि यदि मैं एम्पायर स्टेट बिल्डिंग की छत से कूद जाऊँ तो मैं नीचे आ गिरूँगा, यह शरीर की सीमा है। चॉमस्की यह भी कहेंगे कि जो जटिलताएँ हमारे परिवेश की जटिलताओं के कारण उभरी हैं - शायद पूंजीवाद के बाद के समय की जटिलताएँ जहाँ हमें कई प्रकार की जानकारियों से जूझना पड़ता है - वे भी मानव मस्तिष्क की सीमा के भीतर ही हैं। चॉमस्की से मेरा विवाद इसी मुद्दे पर रहा है। यह मैं मानता हूँ कि एक विशिष्ट क्षमता होती है। जहाँ मैं सहमत नहीं हूँ वह है उनका इस बात पर अड़ना कि यह पूरी तरह से निर्दिष्ट है। मेरे विचार में (चॉमस्की के विपरीत) वह केवल आंशिक रूप से निर्दिष्ट होता है। मेरा तर्क है कि मस्तिष्क में जो है उसके बारे में बहुत कम स्पष्ट रूप से कहने की ज़रूरत है पर वे कहते हैं कि उसमें काफी चीज़ें पूर्व संरचित (Hard-wired) होती हैं।

प्रश्न: जब आप विकासवाद की बात करते हैं तो आप वाग्यंत्र और मस्तिष्क को महत्ता देते हैं। परन्तु चॉमस्की की बात करने पर आप एक भाषा अवयव की बात करते हैं जिसे आप मस्तिष्क में विद्यमान प्रोग्राम कहते हैं। विकासवाद के अनुसार यह प्रोग्राम एक दिन में

तो बना नहीं होगा। हो सकता है वाग्यंत्र और मस्तिष्क में हुए बदलावों के साथ यह भी पैदा या विकसित हुआ हो। तो क्या ये दो सिद्धान्त विच्छिन्न (Discontinuous) हैं? एक सिद्धान्त के अनुसार यह क्षमता विकासक्रमिक है और दूसरे के अनुसार यह मस्तिष्क में पहले ही से कुछ है। क्या ये दोनों आपस में कहीं मिल नहीं रहे हैं?

राजेन्द्र सिंह: नहीं, मेरे अनुसार कठिनाई का स्रोत यही है। चॉमस्की के दावे को लोगों ने उचित ही विच्छिन्न ठहराया है। वे यह नहीं बताते कि किस प्रक्रिया के फलस्वरूप ऐसा हुआ। उनके पास इसका कोई विकासक्रमिक स्पष्टीकरण नहीं है या उन्होंने इस ओर ध्यान ही नहीं दिया है। इसीलिए विच्छिन्नता आती है। कठिनाई यह है कि यदि डार्विन की बात मानें तो भाषा अवयव तक पहुँचने का विकासक्रमिक रास्ता होना चाहिए। परन्तु चॉमस्की के मत में भाषा का जन्म और होमो सेपियंस का उदय एक साथ हुआ।

प्रश्न: परन्तु क्या विकासक्रमिक इतिहास में कुछ चीज़ों के तत्क्षण (स्वतःस्फूर्त यानी Spontaneously) होने के प्रमाण नहीं हैं? जैसे बालों का झड़ना या पूँछ हट जाना काफी जल्दी हुआ। क्या चॉमस्की का भाषा के लिए भी ऐसा मानना ठीक नहीं?

राजेन्द्र सिंह: चॉमस्की का स्पष्टीकरण यही रहा है कि ऐसा हुआ। परन्तु विकासक्रमिक तौर पर ऐसा कैसे हुआ उन्हें इसकी परवाह नहीं। अब लोग कह रहे हैं कि यदि यह पता चल जाए कि ऐसा किस तरह हुआ तो यह पद्धैतिक (Methodological) प्रश्न बन जाएगा। यदि इस बात के पक्के अनुभवमूलक प्रमाण मिल जाते हैं जिनसे इस तथ्य का तर्कसंगत निर्माण हो सके कि L-bone, वाग्यंत्र, मस्तिष्क के आकार में बदलाव और लयबद्ध उच्चारण होने से भाषा क्षमता उत्पन्न हुई तो मुद्दा हल हो जाएगा। यह सत्तामीमांसा (Ontology) और ज्ञानमीमांसा (Epistemology) का तर्क है, यही कार्य पद्धति पर भी लागू हो सकता है। अब तक चॉमस्की जो कहना है कह सकते थे क्योंकि कोई विकल्प उपलब्ध नहीं था। हिलरी पटनम ठीक ही चॉमस्की की इस बात को 'इसके अलावा और क्या' सिद्धान्त ('What else' theory) कहती थीं। What else का क्या मतलब है? इसका मतलब है कि जब कोई स्पष्टीकरण नहीं होता तो एक प्रकार से भगवान का सहारा लेना पड़ता है क्योंकि इसके अलावा और क्या होगा। आप कहते हैं, भगवान की लीला है। पिछले 25-30 सालों में साफ हो गया है कि विकल्प हैं। चॉमस्की गलत नहीं हैं पर अब प्रमाणित करने की ज़िम्मेदारी उनकी है। अब तक यह भार दूसरों पर था। माना कि अब तक उनका तर्क एक शक्तिशाली तर्क था कि भाषा अवयव स्वत: पैदा हुआ, कोई और विकल्प नहीं था। मतलब कि 'इसके अलावा और क्या' सिद्धान्त, परन्तु अब जबकि एक वैकल्पिक सिद्धान्त की रूपरेखा उभर रही है उन्हें यह दिखाना होगा कि वह सही है, बजाय इसके कि बाकी लोग उनके तर्क को गलत ठहराएँ। अब उनका तर्क अस्वीकार किया जा सकता है क्योंकि वह आध्यात्मविद्यात्मिक (Theological) है, वह एक 'इसके अलावा और क्या' स्पष्टीकरण है।

प्रश्न: इस विकल्प की रूपरेखा क्या है?

राजेन्द्र सिंह: जिसकी बात एक तरफ विकासवादी नृविज्ञान (Evolutionary Anthropology) में हो रही है और दूसरी तरफ अधिगम सिद्धान्त (Learning theories) के क्षेत्र में। यदि इन दोनों को साथ देखें, चलिए अधिगम सिद्धान्त की बात छोड़ भी दें, तो विकासवादी नृविज्ञान में अभी उपलब्ध प्रमाणों के अनुसार हम बता सकते हैं कि चॉमस्की जिसे भाषा अवयव कहते हैं उसका जन्म कैसे हुआ। इस जटिल प्रणाली की रचना कई प्रक्रियाओं का संयुक्त परिणाम है। अब यह स्पष्टीकरण गलत हो भी सकता है, और नहीं भी, पर मुद्‌दा यह नहीं है। मुद्‌दा यह है कि, अब प्रमाण का उत्तरदायित्व चॉमस्कीवादियों पर है।

प्रश्न: तो एक स्पष्टीकरण के अनुसार भाषा अवयव धीमे, विकासक्रमिक तौर पर आया और दूसरे के अनुसार वह आकस्मिक ढंग से प्रविष्ट हुआ। परन्तु अभी भी प्रोक्ति की जटिलता का स्पष्टीकरण नहीं है। क्या केवल बातचीत करने की आवश्यकता के कारण भाषा इस हद तक विकसित हो गई?

राजेन्द्र सिंह: नहीं, मेरे अनुसार नृविज्ञान के क्षेत्र में बर्नर्ड कौमरी, कारस्टेअर्स-मैकार्थी आदि के विचार में भाषा की जटिलता धीरे-धीरे क्रमिक ढंग से होमो सेपियंस के दो-तीन पूर्वजों में विकसित हुई।

जब हम कुछ समकालीन प्राकृतिक भाषाओं की संचार प्रणालियों को भी देखते हैं तो उनमें केवल संज्ञा पद ही मिलते हैं। यह एक बीच की अवस्था है। यदि हम वाग्यंत्र और मस्तिष्क के आकार में बदलाव और L-bone के निर्माण और परिवेश में बढ़ती जटिलताओं का परस्पर आदान-प्रदान देखते हैं तो भाषा का जटिल हो जाना समझ में आता है। भाषा अवयव की प्रविष्टि की बात मान लेना ज़रूरी नहीं है। अगर हम इस बात को मानें कि भाषा अवयव अचानक मस्तिष्क में प्रविष्ट हो गया तब हम उसके पहले की किसी अवस्था की बात ही नहीं कर सकते। इससे चॉमस्की के पास यह कहने के अलावा कोई चारा नहीं रह जाएगा कि कारस्टेअर्स-मैकार्थी द्वारा उद्धरित भाषाएँ मानव भाषाएँ नहीं हैं, सो अब यही उनकी तार्किक दुविधा है। अब तक वे भाषा अर्जन की बात करते आए हैं। उनकी कठिनाई चक्रीयता (Circularity) की है। अब एक पूरा समुदाय ऐसी भाषा का प्रयोग कर रहा है जिनमें वे गुण नहीं जो हमने भाषा के लिए ज़रूरी माने हैं। मतलब, अब उन्हें कहना पड़ेगा कि ‘यह भाषा ही नहीं है’।

प्रश्न: वापस चलते हैं मानव भाषाओं के उन गुणों की ओर जो कारस्टेअर्स-मैकार्थी द्वारा उद्धरित भाषाओं में अनुपस्थित हैं, पर भाषा की हमारी धारणा का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं – संरचनाधीनता और पुनरावर्तिता[10]। यदि उदाहरण हिन्दी और अँग्रेज़ी से हों तो उचित होगा...

राजेन्द्र सिंह: संरचनाधीनता अँग्रेज़ी में दिखाना ज़्यादा आसान है, जब आप एक निर्देशक वाक्य से प्रश्नवाचक वाक्य बनाते हैं तो नियम कहता है सहायक क्रिया (Auxiliary Verb) को एक खास जगह रखो। चलिए, आप यह नहीं कहते की फलाँ सहायक को फलाँ जगह रखो।

सहायक और उसकी जगह वाक्य की संरचना पर निर्भर होती है - वह कहीं भी हो सकती है। 'संरचनाधीनता' से उनका यही अभिप्राय है। मिसाल के लिए, John is about to buy something बन जाता है What is John about to buy? ; या फिर John is at home बन जाता है Is John home? और John is not home बन जाता है Isn't John home? आदि। सो निर्धारित चीज़ें निर्धारित जगहों पर चली जाती हैं और यह सब संरचना पर निर्भर करता है ना कि रेखीय क्रम पर।

प्रश्न: क्या हम ये उदाहरण ले सकते हैं: The boys who are playing in the ground are our friends?

राजेन्द्र सिंह: इसमें यदि आप पहले are को वाक्य के मुख पर ले जाएँगे तो वाक्य गलत हो जाएगा। इसका मतलब आपको दूसरे are को आगे ले जाना होगा। अतः सहायक क्रियाओं का संचलन संरचना पर निर्भर करता है, रेखीय क्रम पर नहीं। (यानी जो पास वाला है वह आगे नहीं जाएगा पर वह जाएगा जो सरंचनात्मक दृष्टि से उपयुक्त होगा, चाहे वह फिर दूर ही क्यों ना हो।)

प्रश्न: आपका मतलब है स्थान हमेशा रेखीय नहीं होते पर हमेशा संरचनात्मक होते हैं।

राजेन्द्र सिंह: हाँ, बिलकुल ठीक। अब पुनरावर्तिता की ओर वापस चलते हैं। पुनरावर्तिता वाक्य के अन्दर वाक्य डालने की क्षमता है। मतलब, हम बिना रुके I met John who is Helen's brother who is about to get the Doctorate degree जैसे वाक्य बनाते चले जा सकते हैं। असल में अपने एक प्रारम्भिक लेख (1962 या 1963) में चॉमस्की का विवाद विक्टर इंगवे (1960) जैसे लोगों के साथ हुआ था जो कह रहे थे कि एक साधारण प्रसंग-निरपेक्ष पदबन्ध संरचना व्याकरण (Context-free phrase structure grammar) भाषा के तथ्यों के स्पष्टीकरण के लिए काफी था। ठीक उसी समय चॉमस्की ने गणितीय ढंग से प्रमाणित किया था कि प्राकृतिक भाषाएँ प्रसंग-सापेक्ष पदबन्ध संरचना व्याकरण (Context-sensitive phrase structure grammar) के बिना समझी नहीं जा सकतीं। उन्होंने एक नई चीज़ रचनान्तरण (Transformation) भी प्रस्तुत किया। उन्होंने दिखाया कि प्रसंग-निरपेक्ष पदबन्ध संरचना व्याकरण में ये संशोधन करने पड़ेंगे। मानसिक दृष्टि से यह स्किनेरियन दृष्टिकोण पर बड़ी विजय थी। यह एक पक्का गणितीय प्रमाण था और भाषा वैज्ञानिक तौर पर यह साफ हो गया कि हमें एक प्रसंग-सापेक्ष पदबन्ध संरचना व्याकरण की आवश्यकता है जिसमें संचलन और रचनान्तरण की व्यवस्था से भाषा के तथ्यों का स्पष्टीकरण हो सके। तीसरा मुद्दा है चॉमस्की के तर्क के तीसरे पहलू का, जिसकी बात हमने लगभग दो साल पहले *'Construction of Knowledge'* (ज्ञान का निर्माण) नामक सेमिनार के सन्दर्भ में की थी। यह पहलू है कि न केवल भाषा में ये गुण होते हैं, वे सिर्फ भाषा में ही होते हैं। चॉमस्की के मत के तीन पहलू हैं: पहला - भाषा के अनूठे गुण, दूसरा - अनअधिगम्यता (Unlearnability) और तीसरा - कि ये गुण बेजोड़ होते हैं, बेजोड़ से उनका मतलब है कि वे किसी और प्रकार के मानव संज्ञान में इस्तेमाल नहीं होते। चक्र (Cycle) का उदाहरण *The Sound Pattern of English*[11] (1968) में किया गया था जहाँ तर्क दिया गया था कि सरलता की धारणा और शब्द का विचार प्याज़ की तरह होता है जिसमें हर तह गणितीय रूप से 'चक्र' के रूप में

परिभाषित होती है। तर्क यह था कि इस तरह का चक्रीय प्रसंस्करण (Cyclic Processing) मानव संज्ञान के किसी और क्षेत्र में पाया नहीं जाता। पिआजे-चॉमस्की विवाद[12] के केन्द्र में यही बात मुख्य है। आज भी इस विवाद से साक्षात्कार काफी मूल्यवान हो सकता है। इसमें चॉमस्की लगातार यही कहते हैं कि कुछ चीज़ें ऐसी हैं जो बाकी संज्ञानात्मक क्षेत्रों में नहीं होतीं। वह फिर दृष्टि क्षमता का उदाहरण देकर कहते हैं कि दृष्टि जैविक ढंग से निर्धारित होती है (और वैसे ही भाषा भी) क्योंकि उसमें कहीं और प्रयोग न होने वाली प्रसंस्करण विधियाँ प्रयोग होती हैं। उदाहरण के लिए संज्ञान के वे प्रक्षेत्र जहाँ पुनरावर्तिता और अधोवर्तिता (Subjacency) (चॉमस्की द्वारा सुझाया गया शब्द) का कोई औचित्य नहीं है जैसे संगीत और गणित। पिछले 40 सालों में विवाद के इस हिस्से पर बाकायदा सवाल उठाए गए हैं। ऐसा प्रस्तावित किया गया है कि संगीत और भाषा में समानताएँ हैं, गणित और संगीत में समानताएँ हैं और भाषा और संज्ञान के दूसरे प्रक्षेत्रों में भी। ऐतिहासिक तौर पर इस अनुसन्धान की रूपावली का निर्माण एक महत्तमतावादी (Maximalist) निर्माण था। 'महत्तमतावादी निर्माण' से मेरा अभिप्राय यह है कि भाषा विज्ञानी भाषाओं का विश्लेषण करते थे और पाए गए गुणों को बेजोड़ गुण बता देते थे, बिना यह देखे कि संगीत, गणित आदि संज्ञान के प्रक्षेत्रों में क्या हो रहा है। 60 और 70 के दशक में जो भी भाषाओं के सन्दर्भ में पाया जाता था उसे भाषा का बेजोड़ गुण घोषित कर दिया जाता था। गौरतलब है कि बाद में भाषा और संगीत (और गणित) में सदृश गुणधर्म पाए भी गए। एक साधारण उदाहरण लेते हैं: युक्त (Clitic) एक ऐसी चीज़ है जो अधिकतर यूरोपीय भाषाओं में पाई जाती है और यह पाया गया कि यह संगीत में भी पाई जाती है।

प्रश्न: 'युक्त' क्या होता है?

राजेन्द्र सिंह: 'युक्त' एक ऐसी चीज़ है जो शब्द से जुड़ती है पर न वह शब्द है न प्रत्यय (Suffix)। एक उदाहरण है John's hat। इसमें s न तो पूरा शब्द है न प्रत्यय है। कैसे मालूम पड़ेगा कि वह प्रत्यय नहीं है?

प्रश्न: यह dogs के s से काफी अलग है।

राजेन्द्र सिंह: Dogs का s अक्षर dog शब्द से सीधा जुड़ता है परन्तु यदि आप The king of England's hat को लें तो s अक्षर England से जुड़ता है जबकि hat इंग्लैंड के king का है England का नहीं। यह उदाहरण साफ है ना? यहाँ s प्रत्यय नहीं बल्कि युक्त है। यूरोपीय भाषाओं में सर्वत्र ऐसा पाया जाता है और जिस स्थान पर युक्त जुड़ सकता है उसे वैकरनैगल स्थान (Wackernagel's Position) कहा जाता है। वैकरनैगल 19वीं सदी के एक जर्मन व्याकरणाचार्य थे जिन्होंने स्पेनिश, इतालवी और कई और भाषाओं में युक्त का वर्णन किया था। जब संगीत के क्षेत्र में शोध किया गया तो पाया गया कि जब आप एक शुद्ध स्वर (Major note) को कोमल स्वर (Minor note) में बदलते हैं तो वह वैकरनैगल स्थान पर ही होता है। यह काफी दिलचस्प खोज है। इससे पता चला कि भाषा और संगीत में ऊपरी ही नहीं गहरी समानताएँ हैं। भाषा का वैकरनैगल स्थान संगीत में शुद्ध स्वर के कोमल स्वर में बदलने के स्थान जैसा ही है। अब यह नहीं कहा जा सकता कि भाषा और संगीत में कुछ समानता नहीं है।

प्रश्न: 'वैकरनैगल स्थान' क्या है?

राजेन्द्र सिंह: यह स्थान संज्ञा पदबन्ध के बाद और सहायक क्रिया के पहले पड़ता है। इससे जो दूसरा दावा उभरता है वह भी काफी दिलचस्प है। उस समय लोगों ने व्याकरणित वर्णनों पर नज़र डाली और उन्हें संगीत और संज्ञान के और क्षेत्रों में परखकर देखा। मुझे याद है मैंने न्यूयॉर्क भूमिगत रेल प्रणाली का एक व्याकरण पढ़ा था जो ऐसे लिखा गया था मानो एक रचनान्तरण हो। ऐसे पदबन्ध संरचना नियम थे जो आपको 48 से 86 स्ट्रीट पर ले जाते थे और फिर एक रचनान्तरण जो आपको ग्रीन लाइन से येलो लाइन और फिर येलो लाइन से ब्लू लाइन पर ले जाता था। लोगों ने भाषा विज्ञान के मॉडल को संगीत पर परखकर देखा और दोनों में समानताएँ दिखाने का प्रयास किया। शोध का यही सामान्य तरीका था, परन्तु भाषा के कुछ बेजोड़ गुण भी पता चले। लोगों ने इन प्रणालियों को अपने आप में देखने का भी प्रयास किया - मुझे याद है दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो निर्मलांशु मुखर्जी ने जनवरी 2006 में मैसूर में अपना दिलचस्प काम प्रस्तुत किया था। उन्होंने दिखाया कि भाषा वैज्ञानिक अध्ययन को संगीत पर नहीं, संगीत-सम्बन्धी अध्ययन को भाषा पर जाँचा जाना चाहिए, तब आप जान पाएँगे कि दोनों में निश्चय ही समानताएँ हैं। परन्तु चॉमस्की का सदैव यह मानना रहा है कि भाषा और उसके गुण अनूठे हैं और अन्यत्र कहीं पाए नहीं जाते। मेरा तर्क हमेशा रहा है कि यदि चॉमस्की कुछ मामलों में सही भी हैं, तो भी संज्ञान के बाकी क्षेत्रों में शोध होना चाहिए। मतलब जब तक हम बाकी क्षेत्रों को नहीं देखेंगे तब तक कैसे साबित होगा कि भाषा खास है।

प्रश्न: भाषा और गणित की समानताओं के अलावा?

राजेन्द्र सिंह: गणना (Enumeration) गणित की एक आम तकनीक है। आप चीज़ें लेते हैं और उनकी प्रगणना करते हैं। इस तरह के 'मिनिमलिस्ट' प्रोग्रामों का यह मुख्य सिद्धान्त है, क्योंकि यदि आपके पास कुछ चीज़ें हैं तो सबसे पहले आप उनकी गणना करते हैं और फिर उनके समुच्च्य बनाते हैं।

प्रश्न: क्या चॉमस्की की पहले की और आज की सोच में कुछ फर्क है?

राजेन्द्र सिंह: चॉमस्की जो पहले करते थे और जो अब करते हैं उसमें सम्बन्ध ज़रूर है परन्तु मैं उनके दिशा-परिवर्तन से इत्तफाक रखता हूँ। पहले उनका दृष्टिकोण महत्तमतावादी हुआ करता था, मतलब मैं दोहराता हूँ, भाषा के बेजोड़ गुण खोजना परन्तु उन गुणों को कहीं और न परखना। अब 1997-98 से अपने 'मिनिमलिस्ट प्रोग्राम' के अन्तर्गत वे सुपाठ्यता की शर्तों (Legibility Conditions) की बात करते हैं। यदि मेरा अनुमान ठीक है तो उन्होंने सबसे पहले यह बात *आर्किटेक्चर ऑफ लैंग्वेज* (चॉमस्की, 2000) के रूप में छपे अपने दिल्ली में दिए गए लेक्चर में कही थी। विचार यह है कि मस्तिष्क को सूचनाएँ 'पढ़नी' होती है और यह तभी हो सकता है जब भाषा का निर्माण इस प्रकार हो कि एक तरफ वह अर्थक्रियात्मकता (Pragmatics) के साथ और दूसरी तरफ संवेदी प्रेरक तंत्र (Sensory Motor Mechanisms) के साथ परस्पर क्रिया कर पाए, यानी भाषा की एक आन्तरिक लिपि हो जो मस्तिष्क की

बाकी प्रणालियों द्वारा समझी जा सके। इससे चॉमस्की का मतलब है कि भाषा में बहुत कम चीज़ें अद्वितीय हैं। ऐसा इसलिए है कि एक ओर भाषा मानव शरीर तंत्र से और दूसरी ओर अर्थक्रियात्मकता से परस्पर क्रिया करती है। अब भाषा की अद्वितीयता पर ज़ोर बहुत कम है।

यदि आप 1957 और 1987 के बीच का समय देखें तो जानेंगे कि जो भी रचनान्तरणपरक व्याकरण (Transformational Grammar) ने उजागर किया वह भाषा का सिद्धान्त मान लिया गया और यही नहीं, एक अद्वितीय सिद्धान्त भी। मेरे अनुसार चॉमस्की की अतिविशिष्ट सोच में यह एक बड़ा अवधारणात्मक परिवर्तन है जो कि बहुत ही खुशनुमा और उत्साहवर्धक है। इससे यह दरवाज़ा खुला है कि हम यह कह पाएँ कि भाषा शरीर तंत्र, अर्थक्रियात्मकता, संगीत, गणित आदि का एक साथ अध्ययन करने की ज़रूरत है, नहीं तो हम इनमें से एक को भी ठीक से समझ नहीं पाएँगे। चॉमस्की का यह कहना बहुत बड़ा बदलाव है।

प्रश्न: 'संज्ञान के प्रक्षेत्र' से क्या तात्पर्य है?

राजेन्द्र सिंह: मेरे विचार में चॉमस्की बार-बार गणित और संगीत की बात भाषा का अनूठापन दर्शाने के लिए करते हैं। उनके लिए संगीत और गणित से भाषा को अलग दिखाना ज़रूरी था क्योंकि आम सोच में गणना और संख्या तंत्र आदि को साथ लेकर देखा जाता है। बहुत समय से यह तर्क दिया जाता रहा है कि गणितीय या तार्किक क्षमता भाषा क्षमता का ही एक अत्यधिक परिष्कृत रूप है - भाषा अलग है परन्तु यदि उसे परिष्कृत किया जाए तो तर्क क्षमता और गणितीय क्षमता प्राप्त होगी। इसीलिए वे इन दोनों का प्रयोग करते रहे हैं क्योंकि इनको इसी तरह देखा जाता है। अब उन्होंने यह मान लिया है कि ऐसा नहीं है। सच में इससे उनकी महानता का ज्ञान होता है क्योंकि अपने मत के विपरीत प्रमाण मिलने पर उन्होंने उसमें संशोधन किया, कोई छोटी सोच का व्यक्ति ऐसा नहीं कर पाता।

प्रश्न: आप कह रहे थे कि भाषा होमो सेपियंस तक सीमित है, पर क्या यह पूरी तरह साबित हो चुका है? मनुष्य की श्रवण क्षमता के परे भी कुछ चीज़ें हैं जैसे चमगादड़ की आवाज़, पारस्वनिक ध्वनियाँ (Ultrasonic Sound)। मैं प्रश्न को थोड़ा और तीखा कर देता हूँ। इस घमण्ड की क्या वजह है कि केवल मनुष्य ही जटिल संदेश बना सकता है, इसके कोई प्रमाण हैं?

राजेन्द्र सिंह: यह समझना आसान नहीं कि घमण्ड की क्या वजह है। इसका ऐतिहासिक कारण है मनुष्य का स्वयं को सृष्टि का केन्द्र मान लेना (कम से कम पाश्चात्य परम्परा में)।

प्रश्न: वो ठीक है पर कोई वैज्ञानिक प्रमाण भी है?

राजेन्द्र सिंह: मैं इस घमण्ड की वजह समझाने का प्रयास कर रहा हूँ। आप चाहें तो हम कह सकते हैं कि यह Garden of Eden (अदन वाटिका) से आया है। हम मानते हैं कि हम में जो भी गुण हैं वे किसी भी प्राणी में पाए जाने वाले सबसे श्रेष्ठ गुण हैं। यह अभिमान भारत या भारतीय लोकाचार में अनुपस्थित है। पिछली रात आप और मैं इसी विषय पर बात कर

रहे थे और हमने माना कि भारतीय परम्परा में मनुष्य को सृष्टि का केन्द्र नहीं माना गया है क्योंकि उसमें पुरुष और प्रकृति[13] को बराबर का दर्जा दिया गया है और सृष्टि को पुरुष और प्रकृति की परस्पर क्रिया माना गया है। पाश्चात्य परम्परा में सृष्टि का केन्द्र मनुष्य[14] को माना गया है। इसके प्रमाण क्या हैं? यह दावा कि हमारे पास संरचनाधीनता और पुनरावर्तिता है (और बाकी प्राणियों के पास नहीं)।

प्रश्न: हमने दूसरी प्रजातियों की भाषाओं का अध्ययन किया है?

राजेन्द्र सिंह: हाँ, 70 के दशक में चॉमस्की ने मधुमक्खियों की बाबत प्रमाण प्रस्तुत किए थे। उन्होंने इंगित किया कि मधुमक्खियाँ ऊपर की ओर उड़कर बाकी मधुमक्खियों को बता सकती है कि शहद कहाँ पर है, या वे दाईं या बाईं ओर उड़ सकती हैं। परन्तु वे बाईं ओर ऊपर की ओर उड़कर यह नहीं बता सकतीं कि दूसरी दिशा में मत जाओ। सो उनकी संचार प्रणाली में बाध्यताएँ हैं जो पुनरावर्तिता न होने का संकेत है।

प्रश्न: क्या वह (पुनरावर्तिता) मानव श्रवण क्षमता के परे नहीं पाई गई है?

राजेन्द्र सिंह: शायद नहीं, परन्तु यदि हम ऐसा प्रमाणित करना चाहें तो यह ज़िम्मेदारी चॉमस्की की नहीं हमारी होगी। मेरा अभिप्राय है कि उनके पास एक वैज्ञानिक परिकल्पना है और यदि हमें वह पसन्द नहीं तो यह प्रमाणित करना हमारे ऊपर है कि कुत्ते की श्रवण क्षमता की जटिलता मानव भाषा प्रणाली से मेल खाती है या नहीं। मैं इतना ही कहूँगा कि यदि हाथियों, कुत्तों और मधुमक्खियों के पास अपनी भाषाएँ हैं तो वे हमारे लिए मुख्य मुद्दा नहीं है क्योंकि जीव वैज्ञानिक तौर पर यह महत्वपूर्ण है कि मनुष्य अपनी प्रजाति के प्राणियों के साथ मिलकर स्वयं का अध्ययन कर सकता है जबकि हाथी और कुत्ते ऐसा नहीं कर सकते। शायद होमो सेपियंस होने का यही मूल्य चुकाना पड़ता है। बाकी प्राणियों के विपरीत हम काफी स्वकेन्द्रित होते हैं।

प्रश्न: यह बात कि जानवर विचारों का ज़्यादा आदान-प्रदान नहीं करते, चॉमस्की से पहले की है। मेरा मतलब बाकायदा दो कुत्तों के बीच के आदान-प्रदान या बातचीत को मापा गया होगा?

राजेन्द्र सिंह: नहीं, केवल मधुमक्खियों की और व्हेल मछलियों की संचार प्रणालियों का ठीक प्रकार अध्ययन हुआ है और यह एक-दो दिन नहीं बल्कि सालों में हुआ है।

प्रश्न: क्या कुछ लोगों ने चिम्पांज़ी भाषाएँ सीखने का प्रयास भी किया है? क्या वे उसमें सफल हुए हैं?

राजेन्द्र सिंह: हाँ, प्रीमैक[15] ने प्रयास किया था। वे दिखाना चाहते थे कि चिम्पांज़ी भी मानव भाषा जितनी जटिल संचार प्रणालियों का प्रयोग कर सकते थे। उनके सहायक चिम्पांज़ियों से

वार्तालाप करने में सफल भी रहे परन्तु उन्होंने पाया कि कुछ चीज़ों के अलावा मानव भाषा और चिम्पांज़ी भाषा में कोई समानताएँ नहीं हैं।

टिप्पणियाँ

1. **ऐन्ड्रयू कारस्टेअर्स-मैकार्थी:** ऐन्ड्रयू कारस्टेअर्स-मैकार्थी क्रमिक विकास (या उद्विकास, Evolution) और भाषा के विकास का प्रकार्यवादी (Functionalist) दृष्टिकोण रखते हैं। चॉमस्की के विपरीत उनका मत है कि भाषा एक धीमी विकासक्रमिक प्रक्रिया का परिणाम है न कि एक आकस्मिक घटना का। यह मानव के दो पैरों पर चलना शुरू करने के बाद हुए स्वरयंत्र (Larynx) के विकास से हुआ। इससे हमारे पूर्वजों द्वारा निकाली जा सकने वाली ध्वनियों में वृद्धि हुई जिससे, कारस्टेअर्स-मैकार्थी के अनुसार, वाक्यविन्यास (Syntax) का विकास हुआ।

2. **संज्ञा पदबन्ध** (Noun phrase): वह पदबन्ध जो वाक्य में संज्ञा का काम करता है। इसका अन्तिम शब्द संज्ञा होता है और बाकी शब्द इसी पर आश्रित होते हैं। जैसे कि,

(क) एक प्यारी बिल्ली

(ख) एक प्यारी बिल्ली जिसे तुमने देखा।

ये दोनों ही संज्ञा पदबन्ध हैं। यदि (क) में से बिल्ली को हटा दें तो वाक्य में कुछ नहीं रह जाता, दूसरे शब्दों में 'एक' जो कि निर्धारक है, 'प्यारी' जो कि विशेषण है यह दोनों बिल्ली की वजह से ही इस पदबन्ध में हैं। यानी प्रमुख घटक बिल्ली है जो एक संज्ञा है। और इसी पर यह पूरा पदबन्ध टिका है। इसमें एक और प्यारी शब्द गौण हैं। इसी तरह (ख) में भी 'बिल्ली' ही प्रमुख शब्द है। यदि इसमें से बिल्ली हटा दें तो यह कुछ ऐसा होगा 'एक प्यारी जिसे तुमने देखा' यानी मूल अर्थ बिल्ली के साथ ही बनता है अतः यह भी एक संज्ञा पदबन्ध ही है।

एक वाक्य में एक से अधिक संज्ञा पदबन्ध भी हो सकते हैं। जैसे, स्कूल की किताबें, बहुत से छात्रों को पसन्द नहीं है। इसमें स्कूल की किताबें और बहुत से छात्र दो संज्ञा पदबन्ध हैं।

3. **मार्क्स** (मात्रात्मक बदलाव गुणात्मक बदलाव लाते हैं): मार्क्स का रूपान्तरण सिद्धान्त (Law of Transformations) कहता है कि लगातार होता मात्रात्मक विकास अन्त में गुणात्मक बदलाव लाता है। इस प्रकार एक हस्ती/तत्व सत्व (Entity) में लगातार होने वाले मात्रात्मक बदलाव उसमें गुणात्मक बदलाव ला सकते हैं। कहा जा सकता है कि वाग्यंत्र और शब्दकोश के विकास में ऐसा ही हुआ।

4. **चॉमस्की प्राक्कल्पना:** नोम चॉमस्की ने प्रस्तावित किया है कि मनुष्यों में भाषा विकास को समझने का एक ही तरीका है - एक ऐसे भाषा अवयव की कल्पना करना जो केवल मनुष्यों में होता है। हालाँकि चॉमस्की यह स्पष्ट नहीं करते कि भाषा अवयव किस विकासक्रमिक प्रक्रिया से जन्मा, उनका मानना है कि यह यंत्र हमेशा से मानव मस्तिष्क का हिस्सा रहा है और वे आम तौर पर इस बाबत अटकलें नहीं लगाते।

5. **प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन** (Phylogeny) **और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन** (Ontogeny): प्रजातिवृत्तीय परिवर्तन एक प्रजाति के विकास का अध्ययन है और व्यक्तिवृत्तीय परिवर्तन उस प्रजाति के एक सदस्य के विकास का। हाल में विकासक्रमिक आनुवंशिकी (Evolutionary Bio-genetics) में हुए शोधों के पश्चात् यह माना जाने लगा है कि किसी प्रजाति के हर सदस्य का विकास उस प्रजाति के सदियों में हुए विकास का पुनर्निमाण होता है।

6. **प्लेटो की समस्या या प्लेटो का प्रश्न** (Plato's Problem): प्लेटो की समस्या इस प्रकार है: बच्चे को मिलने वाली भाषा सामग्री (Input या आगत) की प्रकृति व मात्रा और उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा (Output या उत्पाद) की प्रकृति और मात्रा में ज़मीन-आसमान का फर्क होता है। ऐसा कैसे होता है कि अपने प्रारम्भिक वर्षों में बच्चे का सीमित

भाषा से सामना होता है फिर भी चार साल का होते-होते उसके मस्तिष्क में पूरा व्याकरण तैयार हो जाता है - वह जटिल वाक्य बोल और समझ लेता है? इस प्रश्न के किसी भी उत्तर में (जैसा कि चॉमस्की ने दिया है) इस अन्तर का स्पष्टीकरण होना चाहिए। भाषा के सन्दर्भ में यह अन्तर बच्चे द्वारा अनुभव किए गए उद्दीपन के अभाव (Poverty of Stimulus) और उसके द्वारा अर्जित जानकारी (यानी व्याकरण) की जटिलता के बीच का है। यह जटिलता हर स्तर पर पाई जाती है - स्वनिमविज्ञान (Phonology), शब्द विज्ञानरूप प्रक्रिया (Morphology) और वाक्य विन्यास (Syntax)।

7. **समान्तर वितरित प्रसंस्करण** (Parallel Distributed Processing): समान्तर वितरित प्रसंस्करण का उपयोग मानव मस्तिष्क के सूचना प्रसंस्करण तंत्रों के प्रारूप तैयार करने में होता है। ऐसे प्रारूप तीन सिद्धान्तों पर काम करते हैं - पहला, सूचना का प्रतिरूपण इकाइयों (मस्तिष्क के neurons या तंत्रिका कोशिकाओं) में वितरित होता है; दूसरा, सूचना का संचय इन इकाइयों में नहीं बल्कि उनके बीच के जोड़ों में होता है (तंत्रिका कोशिकाओं का जाल); और तीसरा, नई सूचना जुड़ने से इन इकाइयों के बीच के जोड़ मज़बूत होते हैं (जानकारी के बढ़ने से तंत्रिका कोशिका जाल का सशक्तिकरण होता है।)

8. **संचलन:** संचलन क्या है इसको समझने के लिए कुछ उदाहरण यहाँ दिए गए हैं। अँग्रेज़ी में सवाल बनाने में wh-fronting होती है। अत: *wh* वाले शब्द शुरू में ही आते हैं और जहाँ उसका उत्तर जाएगा उस वाक्यांश से दूर होते हैं। जैसे,

Ram will come here tomorrow?

When will Ram come here?

हिन्दी का ‘क्या’, ‘क्यों’, ‘कैसे’ वहीं जाता है जहाँ उस सवाल का उत्तर आएगा। जैसे,

राम कल जयपुर जा रहा है।

कौन कल जयपुर जा रहा है?

राम कल कहाँ जा रहा है?

राम कब जयपुर जा रहा है?

आप इस वाक्य को अँग्रेज़ी में लिखकर यही प्रश्न बना सकते हैं। उसमें यह संचलन अलग ढंग से होगा। एक ओर किस्म का देखें,

a. We want to see that picture again.

b. That picture we want to see ___ again. (Topicalization)

हम वही कहानी फिर से सुनना चाहते हैं।

वही कहानी हम फिर से सुनना चाहते हैं।

इसे भी देखें -

उसकी टोपी लाल रंग की थी।

लाल रंग की थी उसकी टोपी

और यह भी

a. Something that you did’nt imagine happened.

b. Something happened that you didn’t imagine. (Extraposition)

ऐसा कुछ हुआ जिसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते थे।

जिसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते थे ऐसा कुछ हुआ।

मोहन को राम ने मारा।

राम ने मोहन को मारा।

रहीम यहाँ रूका था।

रूका था रहीम यहाँ।

संचलन की आवश्यकता सवाल बनाने के लिए अथवा वक्तव्य में प्रभावशीलता लाने के लिए होती है। इसके लिए बने नियम सरल व व्यापक होने चाहिए व हर भाषा के लिए ऐसे हों कि उसके उपयोग के हर सन्दर्भ में काम आ सकें। चॉमस्की की वृहद व्याख्या से इसके लिए रास्ते निकलते हैं, राजेन्द्र सिंह का मानना है कि अन्य प्रयासों जैसे समान्तर वितरण प्रसंस्करण इससे अभी नहीं जूझ सकते।

9. **संरचनाधीनता** (Structure Dependency): भाषा संरचनाधीन होती है क्योंकि भाषा संकाय में नियम और बाध्यताएँ शब्दों के क्रमानुसार न होकर घटकों (Constituents) यानी संज्ञा पदबन्ध, क्रिया पदबन्ध आदि के अनुसार होते हैं। इसका प्रमाण अँग्रेज़ी के हाँ/नहीं (Yes/No) प्रश्नों से मिल सकता है जिनमें प्रश्न-निर्माण मुख्य उपवाक्य (Main Clause) की सहायक क्रिया (Auxiliary) को वाक्य के मुख पर ले जाकर होता है जैसे – The girl who is from Delhi is in the next room बन जाता है – Is the girl who is from Delhi in the next room? ऐसा दूसरे, तीसरे या चौथे शब्द को वाक्य के मुख पर लाकर नहीं किया जाता। मिसाल के लिए,

* Girl the who is from Delhi is in the next room.

* Who the girl is from Delhi is in the next room.

* Is the girl who from Delhi is in the next room.

10. **पुनरावर्तिता** (Recursiveness): पुनरावर्तिता वाक्य में अपरिमित अन्त:स्थापन (Infinite Embedding) सम्भव बनाती है। उदाहरण स्वरूप, अँग्रेज़ी में The boy has arrived वाक्य में अपरिमित अन्त:स्थापन द्वारा अनगिनत सम्बन्धवाचक उपवाक्य (Relative Clause) डाले जा सकते हैं और भाषा का वाक्यविन्यास इस पर कोई बाध्यता नहीं लगाता।

The boy, who is from Kerala, who graduated last year, who. . . has arrived yesterday at 6 pm at the old railway station with. . .

11. **द साउंड पैटर्न ऑफ इंग्लिश (1968):** नोम चॉमस्की और मौरिस हैल द्वारा लिखा स्वनिमविज्ञान का महत्वपूर्ण कार्य है और यह आज भी अँग्रेज़ी भाषा के अध्ययन में मील का पत्थर माना जाता है। इसमें प्रस्तुत किए गए स्वनिमविज्ञान के सिद्धान्त समकालीन वाक्यविन्यास के सिद्धान्तों से मेल खाते हैं - गहन संरचना (Deep Structure) के स्तर के आधार रूप (Base Form) रूपान्तरणों (Transformations) के द्वारा उच्चारित रूप (Uttered Form) में बाहर आते हैं। प्रजनक स्वनिमविज्ञान (Generative Phonology) के कई समकालीन सिद्धान्त इसी किताब में प्रस्तुत या वर्णित विचारों से प्रेरित हैं।

12. **पिआजे-चॉमस्की विवाद:** यह इस मुद्दे पर केन्द्रित है कि बच्चे द्वारा भाषा अर्जन किस हद तक उसकी दूसरी संज्ञानात्मक क्षमताओं के विकास से भिन्न या समान है। चॉमस्की का दृष्टिकोण सहजज्ञानवादी (Nativist) है - उनका मानना है कि मानव मस्तिष्क में एक पूर्व क्रमादेशित (Pre-programmed) प्रणाली होती है जो भाषा अर्जन का कार्य करती है (देखें 'चॉमस्की प्राक्कल्पना')। इसके विरुद्ध, पिआजे का दृष्टिकोण रचनात्मकतावादी है जिसके अनुसार बच्चे में हर प्रकार का संज्ञानात्मक विकास अपने परिवेश के साथ परस्पर क्रिया द्वारा होता है। संज्ञान व्यवस्था के नए स्तरों का निर्माण कर बच्चा अपने आसपास की दुनिया को समझने का प्रयास करता है। भाषा की भूमिका इसमें महत्वपूर्ण नहीं होती क्योंकि संज्ञान क्षमता भाषा से पहले विकसित होती है। भाषा भी बाकी संज्ञानात्मक अर्जन की तरह धीमे निर्माण की प्रक्रिया द्वारा सीखी जाती है। (देखें: मासिमो पियाटेली-पॉलमरीनी, 1980, *लैंग्वेज एंड लर्निंग: द डीबेट बिटवीन ज्याँ पिआजे एंड नोम चॉमस्की*, कैम्ब्रिज एमए: हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 409)।

13. मानवकेन्द्रित (Anthropocentric): यह विचार कि मानव सृष्टि का केन्द्र है और जिस पृथ्वी पर वह रहता है वह ब्रम्हाण्ड का केन्द्र है और सारे तारे, ग्रह और उपग्रह पृथ्वी का चक्कर लगाते हैं, प्राचीन यूनान (Greece) में जन्मा। सबसे पहले 16वीं सदी में कॉपरनिकस द्वारा आपत्ति करने पर यह कमज़ोर पड़ा और फिर गैलिलियो के कारण इस विचारधारा का और पतन हुआ।

14. सांख्य, पुरुष और प्रकृति: सांख्य पुरातन भारतीय दर्शनशास्त्र की छह विचारधाराओं में से एक है। इसके अनुसार सृष्टि के दो सनातन सत्य हैं - पुरुष (मस्तिष्क, संज्ञान का केन्द्र) और प्रकृति (भौतिक अस्तित्व का स्रोत)। मानव अनुभव इन दोनों की परस्पर क्रिया द्वारा समझा जाता है।

15. डेविड प्रीमैक: डेविड और एन जेम्स प्रीमैक ने चिम्पांज़ियों को एक विशेष सांकेतिक भाषा द्वारा बातचीत सिखाने का प्रयास किया था। इसमें आवाज़ की जगह प्लास्टिक के टोकन को बातचीत का माध्यम बनाया गया था।

सन्दर्भ

- *भाषा की प्रकृति और संरचना,* 2006, विद्या भवन पब्लिकेशन, उदयपुर, राजस्थान
  (प्रो राजेन्द्र सिंह से यह बातचीत रमाकान्त अग्निहोत्री, हृदय कान्त दीवान, प्रसून कुमार, स्नेहल शाह तथा नम्रता बत्रा ने की थी।)